Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:10(5), October, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed : Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available : www.ijmer.in

हिंदी की सामाजिक प्रतिबद्धता

डॉ. गोरख प्रभाकर काकडे
हिंदी विभाग,
सरस्वती भुवन कला एवं वाणिज्य
महाविद्यालय, छत्रपति संभाजीनगर
मो. नं. 9011436144
ईमेल - dr.gorakhkakade@gmail.com

हमारी संस्कृति और हम सभी, हमेशा 'मैं' की नहीं 'हम' की बात करते हैं। जिसके केंद्र में 'हम' यानी समूह जीवन, समष्टि है। इसका पूर्णत्व एक में नहीं उस एक का अपना अस्तित्व रखते हुए अनेकों में समाहित होने में है, अनेको को एक में जोड़ने में है। हमारी संस्कृति का मूलाधार 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय' रहा है, जो हमारी प्राचीन संस्कृति से हमने प्राप्त किया हुआ है। हम जानते हैं कि हमें 'मैं' को त्यागे बिना 'हम' की प्राप्ति नहीं हो सकती। अपने उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए हम सबको कबीर के, "जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहिं।"[1] और तुलसीदास के, "परहित सरिस धर्म नहीं भाई, परपीड़ा सम नहीं अधमाई।"[2] और ऐसे ही अनेक साहित्यकारों के विचारों को अपनाना पड़ेगा। हमारे कहने का तात्पर्य है कि इन कवियों, साहित्यकारों ने जो अपने साहित्य में अपनी 'सामाजिक प्रतिबद्धता' निभाई है, उसे हमें भी अपनाना पड़ेगा।

भारतीय साहित्य एवं भाषा की दृष्टि से विचार करें तो अधिक से अधिक लोगों तक यह सामाजिक प्रतिबद्धता को पहुचाने और लोगों में उसे भरने का काम हिंदी ने किया है। हिंदी भाषा और हिंदी साहित्य ने अपनी सामाजिक प्रतिबद्धता की भूमिका बखूबी निभाई है।

वह कैसे ?

यह प्रश्न जब उपस्थित होता है, तो हमारे सामने हिंदी भाषा और साहित्य का वह विस्तृत पटल आता है जिसमें भारतीय जन-मन, संस्कृति, समाज बसा हुआ है।

भारत हिंदी में बोलता है, सुनता है। वह हमारी राजभाषा तो है ही, वह हमारी संपर्क भाषा यानी राष्ट्रभाषा भी है। वह नौ राज्यों - उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, मध्य प्रदेश, उत्तरांचल, हिमाचल प्रदेश, छत्तीसगढ़, राजस्थान, हरियाणा और दो संघ शासित प्रदेशों की मातृभाषा, राजभाषा और संपर्क भाषा भी है। उसकी अपनी सत्रह-अठारह बोलियां हैं। वह भोजपुरी में 'जय राम जी की' बोलती है, ब्रज में 'राधे राधे', मारवाड़ी में 'राम-राम सा' तो छत्तीसगढ़ी में 'जय जोहार' से अभिवादन करती है। वह महाराष्ट्र, पंजाब, गुजरात, बंगाल, असम आदि अनेक राज्यों की द्वितीय भाषा भी है।

कुल मिलाकर कहे तो भारत में वह सशक्त रूप में लोगों तक पहुंची हुई है। और वहां पर वह अपनी सामाजिक प्रतिबद्धता - राष्ट्रीय एकात्मता, राष्ट्रप्रेम, सामाजिक-सांस्कृतिक-धार्मिक एकता की भूमिका के रूप में निभा रही है। वह कहती है -

"मज़हब नहीं सिखाता, आपस में बैर रखना।
हिन्दी हैं हम, वतन है हिन्दोस्ताँ हमारा।।"[3]

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:10(5), October, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed : Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available : www.ijmer.in

यह भाषा जितनी हिंदुओं को अपनी लगती है उतनी ही मुसलमानों को, उतनी ही ईसाइयों को, और उतनी ही जैन-बौद्ध आदि को। यूं ही नहीं राही मासूम रज़ा ने 'महाभारत' के लिखे हुए संवाद लोगों में लोकप्रिय हुए। आज भी हमारे कानों में गूंजता है – 'मैं समय हूं और आज महाभारत की कथा सुनाने जा रहा हूं'।

रामानंद सागर की 'रामायण' में असलम खान ने दस-ग्यारह किरदार निभाए थे। वे कभी केवट बने, तो कभी ऋषि, तो कभी समुद्र देवता। बशीर खान ने 'रामायण' में जो अंगद का रोल किया था वह भी काफी सराहा गया। 'महाभारत' में अर्जुन की भूमिका निभाने वाले फिरोज खान आज भी हमारे ज़ेहन में बसे हुए हैं। जावेद अख्तर जी का लिखा हुआ गीत – 'वो कृष्ण कन्हैया मुरलीधर, मनमोहन कान मुरारी है; गोपाल मनोहर दुख भंजन, घनश्याम अटल मुरारी है'। हमारे दिल को छू जाता है। और हमारी गंगा-जमुनी संस्कृति को पुख्ता करता है।

इससे एक बात स्पष्ट होती है कि हिंदी किसी एक धर्म से, एक जाति से संबंधित भाषा नहीं है। जिस प्रकार सभी धर्मों ने हिंदी को अपनाया है, उसी प्रकार हिंदी ने भी सभी जातियों, धर्मों, समूहों को अपनाया है। वह सभी को एक ही नज़रिये से देखती है। उसके लिए सभी समान हैं। उसके लिए राजा और रंक, नर-नारी-किन्नर एक समान हैं। उसकी दृष्टि से कोई श्रेष्ठ और कोई कनिष्ठ नहीं है। वह कहती है -

"एक बूँद एकै मल मूतर, एक चाम एक गूदा ।
एक ज्योति थै सैब उतपनां कौन बांम्हन कौंन सूदा ॥"[4]

हिंदी हमेशा भारतीय एकता, अखंडता की बात करती आई है। जब-जब भारत पर संकट आया है, तब-तब हिंदी ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उसने हमेशा अपना सीना आगे किया है। अनेकों हिंदी के साहित्यकार स्वतंत्रता आंदोलन में सम्मिलित रहे हैं। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, सियाराम शरण गुप्त, रामवृक्ष बेनीपुरी, माखनलाल चतुर्वेदी, राहुल सांकृत्यायन, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सुभद्रा कुमारी चौहान, पांडे बेचन शर्मा 'उग्र', यशपाल, फणीश्वरनाथ 'रेणु' आदि जेल की यात्रा कर चुके हैं। यह यात्राएं एक-दो दिनों की नहीं तो सालों की रही हैं। 'नवीन' जी और बेनीपुरी जी ने तो जीवन के नौ-नौ साल जेल में बिताए हैं।

हिंदी साहित्यकार व्यक्तिगत जीवन और साहित्यिक जीवन दोनों से समाज के प्रति प्रतिबद्ध रहे हैं। वे जैसे स्वतंत्रता सेनानियों के रूप में स्वयं उपस्थित थे, वैसे ही उनकी कविताएं भी भारतीय अखंडता और एकता के लिए आंदोलन में उपस्थित थीं। उन कविताओं ने आंदोलन में ऊर्जा, उत्साह, ओज भरने का काम किया है। वह आंदोलन का गीत बनकर स्वतंत्रता सेनानियों के मनोभावों की अभिव्यक्ति का माध्यम बनी हैं। कवि माखनलाल चतुर्वेदी 'पुष्प की अभिलाषा' जो सेंट्रल जेल में लिखी गई थी, सुभद्रा कुमारी चौहान की 'झांसी की रानी' आदि कविताएं क्रान्ति और देश प्रेम की भावना जगाने का काम करती हैं । जब हम सुनते हैं कि -

"सिंहासन हिल उठे राजवंशों ने भृकुटी तानी थी,
बूढ़े भारत में भी आई फिर से नयी जवानी थी,
गुमी हुई आज़ादी की कीमत सबने पहचानी थी,
दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी।
चमक उठी सन् सत्तावन में, वह तलवार पुरानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी॥"[5]

तब आज भी हममें ओज भर आता है, राष्ट्र के प्रति समर्पण की भावना तीव्र होती है। इससे अधिक भला और क्या हिंदी की सामाजिक प्रतिबद्धता का सबूत आवश्यक है?

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:10(5), October, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed : Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available : www.ijmer.in

हिंदी ने हमेशा भारत का सर ऊंचा रखने के लिए वीरों में साहस भरने का काम किया है। अपनी मातृभूमि पर मर मिटने की क्षमताएं पैदा की हैं। इतना ही नहीं, तो विदेशियों से भी भारत का श्रेष्ठत्व सिद्ध करवाया है। जयशंकर प्रसाद ने अपने नाटक 'चंद्रगुप्त' की पात्र कार्नेलिया के मुख से कहलवाया है, "यह स्वप्नों का देश- यह त्याग और ज्ञान का पालना- यह प्रेम के रंगभूमि - भारतभूमि क्या भुलायी जा सकती है? कदापि नहीं - अन्य देश मनुष्यों की जन्मभूमि है, यह भारत मानवता की जन्मभूमि है।"[6]

हिंदी केवल भारतीय समाज की ही बात नहीं करती, वह विश्व समाज का भी विचार करती है। 'कामायनी' जयशंकर प्रसाद द्वारा लिखा हुआ महाकाव्य है। इस महाकाव्य की नायिका श्रद्धा महाकाव्य के नायक मनु से कहती है-

"औरों को हंसते देखा मनु,
हंसो और सुख पाओ,
अपने सुख को विस्तृत कर लो,
सबको सुखी बनाओ।"[7]

यहां एक और सवाल उपस्थित हो सकता है कि क्या हिंदी ने स्वतंत्रता के पूर्व ही अपनी सामाजिक प्रतिबद्धता निभाई है, उसके बाद नहीं ? इसका उत्तर है - हां निभाई है और बड़ी शिद्दत के साथ निभाई है।

एक ओर हम स्वतंत्रता का आनंद मना रहे थे, तो दूसरी ओर हम भारत-पाकिस्तान के विभाजन की दाह, त्रासदी से गुजर रहे थे। 'हिंदू-मुस्लिम-सिख-इसाई हम सब हैं भाई-भाई का नारा फीका पड़ रहा था'। आपसी रिश्तों में दरारें पड़ रही थी। यह त्रासदी नासूर बन गई थी। जिसका असर यत्र-तत्र आज भी दिखाई देता है। इस त्रासदी को कम करने का काम हिंदी भाषा-साहित्य ने किया है, करता आ रहा है। इसी त्रासदी से निपटने के लिए हिंदी में भीष्म साहनी ने 'तमस', राही मासूम रज़ा ने 'आधा गांव', कमलेश्वर ने 'कितने पाकिस्तान', बदी उज्जमा ने 'छाको की वापसी', यशपाल ने 'झूठा सच' कृष्णा सोबती ने 'गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिंदुस्तान', मंजूर एहतेशाम ने 'सूखा बरगद' उपन्यास लिखे हैं।

यशपाल द्वारा लिखे गए 'झूठा सच' उपन्यास का एक पात्र जो शरणार्थियों को लेकर आनेवाली बस का ड्राइवर है, वह कहता है , "रब्ब ने जिन्हें एक बनाया था, रब्ब के बंदों ने अपने वहम और जुल्म से उन्हें दो कर दिया।"[8] हिंदी की प्रतिबद्धता यहां के सर्वहारा, गरीबों, पिछड़ों के रोटी-कपड़ा-मकान के साथ भी है। स्वतंत्रता के बाद आशा थी कि अब चारों ओर संपन्नता, खुशहाली, समानता होगी। सभी को समान अवसर होंगे। अब किसी को भूखा पेट नहीं सोना पड़ेगा। परंतु 60 के दशक तक आते-आते सब आशाएं, आकांक्षाएँ, उल्हास मोहभंग में बदल गया। भारतीय समाज भूख, दरिद्रता, बेरोजगारी, सांप्रदायिकता, असहिष्णुता, दमन आदि से बाहर नहीं आ सका। आज भी वह इन समस्याओं का सामना कर रहा है। इन सारी स्थितियों के विरुद्ध हिंदी ने आवाज उठाई। जनता की दबाई जा रही आवाज को मुखर किया। जनकवि बाबा नागार्जुन अपनी कविता 'शासन की बंदूक' में लिखते हैं –

"खड़ी हो गई चाँपकर कंकालों की हूक
नभ में विपुल विराट-सी शासन की बंदूक

उस हिटलरी गुमान पर सभी रहें हैं थूक
जिसमें कानी हो गई शासन की बंदूक

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:10(5), October, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed : Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available : www.ijmer.in

सत्य स्वयं घायल हुआ, गई अहिंसा चूक
जहाँ-तहाँ दगने लगी शासन की बंदूक

जली ठूँठ पर बैठकर गई कोकिला कूक
बाल न बाँका कर सकी शासन की बंदूक''[9]

हिंदी केवल यहां तक ही नहीं रुकती वह हमारी संसद को भी समाज की ओर से जवाबदेही के लिए मजबूर करती है। वह डंके की चोट पर संसद पर व्यंग्य करती है। दुष्यंत कुमार अपनी ग़ज़ल में लिखते हैं -

"भूख है तो सब्र कर रोटी नहीं तो क्या हुआ
आजकल दिल्ली में है ज़ेर-ए-बहस ये मुदद्आ।

गिड़गिड़ाने का यहां कोई असर होता नहीं
पेट भरकर गालियां दो, आह भरकर बददुआ।"[10]

हिंदी साहित्य और साहित्यकारों की प्रतिबद्धता हमेशा मुखर रही है। राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर और तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू के बीच का एक वाकया बढ़ा ही प्रसिद्ध है। लाल किले पर एक कवि सम्मेलन हुआ था। जिसकी अध्यक्षता 'दिनकर' कर रहे थे। इस सम्मेलन में नेहरू जी भी शामिल थे। नेहरू जी सीढ़ियों से ऊपर चढ़ कर मंच की ओर बढ़ रहे थे कि तभी उनका पैर लड़खड़ाया। तुरंत उन्हें दिनकर जी ने पकड़ लिया। नेहरू जी ने मंच पर बैठते हुए दिनकर जी का शुक्रिया अदा किया। दिनकर जी ने हंसते हुए कहा- "इसमें शुक्रिया की क्या बात है जब-जब राजनीति लड़खड़ाई है, उसे कविताओं ने ही सम्भाला है।"

इतने पर भी अगर राजनीति संभलती नहीं है, वह आततायी बनती है, पथभ्रष्ट हो जाती है तो उसे- "दो राह, समय के रथ का घर्घर-नाद सुनों, / सिंहासन खाली करो कि जनता आती है"[11] की चेतावनी भी दिनकर जी देते हैं।

हिंदी की सामाजिक प्रतिबद्धता की सीमाएं केवल भारत तक ही सीमित नहीं है। वह विश्व समाज के प्रति भी चिंतित है। आज हम देख रहे हैं कि विश्व समाज तीसरे विश्व युद्ध की कगार पर आकर रुका हुआ है। किस घड़ी, किस पल वह छिड़ जाए यह कह नहीं सकते। कब कौन किसका पक्ष लेकर युद्ध में कूद पड़े यह सारा अनिश्चित है। विश्व ने इतनी ज्यादा वैज्ञानिक प्रगति कर ली है कि कोई भी सुरक्षित नहीं रहा। कई सारे देश परमाणु शक्तियों से लैस हैं। इस शक्ति की सकारात्मकता से अधिक नकारात्मकता का डर सभी को लग रहा है। इसके प्रति भी हिंदी साहित्य अपनी ओर से पहले ही चेतावनी दे चुका है।

द्वितीय विश्व युद्ध में हिरोशिमा और नागासाकी ने जो भोगा है, और आज भी भोग रहा है। यह किसी के हिस्से ना आए इसके लिए भी हिंदी सचेत है। धर्मवीर भारती अपने नाटक 'अंधा युग' में अश्वत्थामा के ब्रह्मास्त्र की तुलना अप्रत्यक्ष रूप से हिरोशिमा, नागासाकी पर डाले हुए परमाणु बम के साथ करते हैं। और यह दोबारा कभी घटित ना हो इसके लिए विश्व समाज को चेतावनी देते हैं। नाटक में व्यास अश्वत्थामा से कहते हैं -

"मैं हूँ व्यास।
ज्ञात क्या तुम्हें है परिणाम इस ब्रह्मास्त्र का ?
यदि यह लक्ष्य सिद्ध हुआ ओ नरपशु !
तो आगे आने वाली सदियों तक

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:10(5), October, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed : Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available : www.ijmer.in

पृत्वी पर रसमय वनस्पति नहीं होगी
शिशु होंगे पैदा विकलांग और कुष्ठग्रस्त
सारी मनुष्य जाति बौनी हो जायेगी
जो कुछ भी ज्ञान संचित किया है मनुष्य ने
सतयुग में, त्रेता में, द्वापर में
सदा सदा के लिए होगा विलीन वह
गेहूँ की बालों में सर्प फुफकारेंगे
नदियों में बह-बहा कर आयेगी पिघली आग।"[12]

हिंदी अपनी सामाजिक जिम्मेदारियों को भली-भांति जानती है। उसे पता है कि भारत-भाग्य की डोर उसके हाथ में है। उसे किस दिशा में जाना है। किसका स्वीकार करना है, किसे नकारना है। सन् 1936 में भारत के लखनऊ शहर में हुए 'प्रगतिशील लेखक संघ' के अध्यक्षीय भाषण में प्रेमचंद ने कहा था, "साहित्यकार का लक्ष्य केवल महफिल सजाना और मनोरंजन का सामान जुटाना नहीं है, - उसका दरजा इतना न गिराइये। वह देश-भक्ति और राजनिति के पीछे चलनेवाली सच्चाई भी नहीं, बल्कि उनके आगे मशाल दिखाती हुई चलनेवाली सच्चाई है।... हम साहित्य को केवल मनोरंजन और विलासिता की वस्तु नहीं समझते। हमारी कसौटी पर वही साहित्य खरा उतरेगा, जिसमें उच्च चिंतन हो, स्वस्वाधीनता का भाव हो, सौंदर्य का सार हो, सृजन की आत्मा हो, जीवन की सचाइयों का प्रकाश हो, जो हममें गति और बेचैनी पैदा करे, सुलाए नहीं, क्योंकि अब और ज्यादा सोना मृत्यु का लक्षण है।"[13]

जिस भाषा और साहित्य का पुरखा समाज से, समाज जीवन की सच्चाइयों से इतना कटिबंध हो, वह भाषा सामाजिक प्रतिबद्धता को कैसे भूल सकती है भला!

संदर्भ:

1. कबीर - कबीर ग्रंथावली, (संपा.श्यामसुंदरदास) इंडियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग, ज्येष्ठ कृष्ण 13, 1985, पृ. 15
2. तुलसीदास – रामचरितमानस, (उत्तरकांड दोहा-40/1) गीता प्रेस गोरखपुर, पृ. 948
3. इकबाल- http://kavitakosh.org/kk/तराना-ए-हिन्दी_(सारे_जहाँ_से_अच्छा_हिन्दोसिताँ_हमारा_)_/_अल्लामा_इक़बाल
4. कबीर - कबीर ग्रंथावली, (संपा.श्यामसुंदरदास) इंडियन प्रेस लिमिटेड,प्रयाग, ज्येष्ठ कृष्ण 13, 1985, पृ.106
5. सुभद्रा कुमारी चौहान - मुकुल, प्रकाशक श्रीचंद्रशेखर शास्त्री,ओझाबंधु आश्रम, इलाहाबाद, सं.1930, पृ. 47
6. जयशंकर प्रसाद - चंद्रगुप्त, प्रसाद प्रकाशन प्रसाद मंदिर, वाराणसी, सं. 1981 ई. पृ. 116
7. जयशंकर प्रसाद - कामायनी, भारती भंडार लीडर प्रेस, इलाहाबाद, दशम संस्करण, सं. 2015 वि., पृ. 132
8. यशपाल - झूठा सच भाग -1, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, दूसरा संस्करण -2016, पृ. 415
9. नागार्जुन - नागार्जुन रचना संचयन, (संपा. राजेश जोशी) साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, पृ. 135
10. दुष्यंत कुमार - साये में धूप, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, बहत्तरवां संस्करण: सितम्बर, 2021, पृ. 21
11. रामधारी सिंह दिनकर - नील कुसुम, प्रकाशक : केदारनाथ सिंह, उदयांचल,पटना,सं. पुनर्मुद्रण 1986, पृ.71
12. धर्मवीर भारती - अंधा युग, किताब महल, इलाहाबाद, सं. 1976, पृ. 94-95
13. प्रेमचंद - कुछ विचार, सरस्वती प्रेस, बनारस, तृतीय सं. 1945, पृ. 16, 21